ISSN:2583-8849



डॉ. मदन गोपाल लढ़ा
बीकानेर, राजस्थान

आज की राजस्थानी कहानी : रूप और रंग

राजस्थानी आधुनिक कहानी की यात्रा सात दशक पुरानी है, मगर विधा के रूप में इसका सफरनामा एक शताब्दी से भी अधिक अवधि पूर्ण कर चुका है। परंपरा के लिहाज से राजस्थानी कहानी लोक में उपलब्ध वात-साहित्य से प्राण-ऊर्जा ग्रहण करती रही है, जिसका उद्भव एवं विकास कई शताब्दियों में पूर्ण हुआ। राजस्थानी के समृद्ध लोक साहित्य में लोक कथाओं की एक भरी पूरी दुनिया मौजूद है, जो सदियों से मौखिक परंपरा से पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होती रही है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में लोक साहित्य संरक्षण का कार्य गंभीरतापूर्वक प्रारंभ हुआ, जिसमें लोक कथाओं को लिपिबद्ध कर सुरक्षित रखने का स्तुत्य कार्य संपादित किया गया। राजस्थानी कहानी पर लोक कथाओं का प्रभाव बहुत ज्यादा रहा है। अन्य भाषाओं की तरह आजादी के पश्चात राजस्थानी में नई कहानी का उद्भव तो हो गया मगर लोक कथाओं की छाया से बाहर निकलने में उसे काफी वक्त लगा। परंपरा के लिहाज से राजस्थानी की आधुनिक कहानी की शुरुआत वर्ष 1956 में मुरलीधर व्यास राजस्थानी की 'बरसगांठ' और नानूराम संस्कर्ता की 'ग्होयी' से मानते हैं। सुप्रसिद्ध कथाकार विजयदान देथा 'बिज्जी' ने लोक कथाओं के संकलन और लेखन का यशस्वी कार्य संपादित कर जो जमीन तैयार की उस पर राजस्थानी कहानी के वृक्ष को उगाने-पनपाने के लिए नृसिंह राजपुरोहित, अन्नाराम सुदामा, करणीदान बारहठ, यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र' आदि ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। सांवर दइया ने नूतन कथ्य व शिल्पगत प्रयोगों से राजस्थानी कहानी को नए तेवर से संपन्न बनाया। रामेश्वर दयाल श्रीमाली, मूलचंद्र प्राणेश, भंवरलाल 'भ्रमर', मालचंद तिवाड़ी आदि ने कहानी के आकाश में नवीन रंग भरकर इसकी श्रीवृद्धि की। सांवर दइया की 'गळी जिसी गळी' व भ्रमर की 'बातां' जैसी सशक्त कहानियों के उदाहरण से इस तथ्य को सही रूप में समझा जा सकता है। वस्तुत: कहानी विधा को आगे बढाने के लिए तीसरी-चौथी पीढ़ी आज एक साथ सक्रिय नजर आ रही है।

राजस्थानी की वर्तमान कहानी के रूप-रंग को देखना-समझना हो तो मोटे तौर पर इक्कीसवीं सदी की कहानी की बात करना प्रासंगिक रहेगा। बीते ढाई दशकों की कहानियों का गंभीरतापूर्वक पाठोपरांत यह कहा जा सकता है कि राजस्थानी कहानी अब अपने परंपरागत रंग-ढंग के चैखटे से बाहर निकलकर, नए रास्तों-मुकामों की तरफ कदम बढ़ा चुकी है। राजस्थानी की परंपरागत कहानी का कथ्य मुख्य तौर पर ग्रामीण जीवन पर केंद्रित रहा है, वहीं आज की कहानी में हम समय की धड़कन को स्पष्ट तौर पर सुन सकते हैं। नए विषय व नई बुनावट ने कहानी को नई व ताजा बयार से परिपूर्ण बनाया है। आज की कहानी में खेत-खलिहान, गांव-गलियों के साथ मॉल, एयरपोर्ट, होटल, यूनिवर्सिटी, किटी-पार्टी आदि के परिवेश इस बदलाव को रेखांकित कर रहा है। सामाजिक ताने-बाने को आधार बनाकर रची गई कहानियों में भी आज की जिंदगी के रोजमर्रा के किस्सों को जगह मिली है। अब कहानी में केवल सास-बहू का रूठना मनाना नहीं है,

बल्कि एकाकीपन की त्रासदी, पति-पत्नी के बीच तनाव, जरूरतों की पूर्ति नहीं होने से उपजा असंतोष, बेरोजगारी की पीड़ा और अन्य अनेक सामाजिक मनोवृत्तियों को जगह मिली है। लोक-जीवन में तकनीकी क्रांति की आमद अब कहानी में भी पूरी सूक्ष्मता के साथ दर्ज हो रही है। इक्कीसवीं सदी की कहानियों के पात्र कंप्यूटर-मोबाइल आदि अतिआधुनिक तकनीकी साधनों के साथ उपस्थित होते हैं। परंपरा के नाम पर समाज में आधी दुनिया पर थोपी गई बंदिशें टूटी है और समाज में आ रहे खुलेपन को भी कहानी में दर्ज किया जा रहा है। आज की कहानी की महिला पात्र गज भर घूंघट निकाल कर 'टिचकारी' से काम नहीं चलाती, बल्कि कथानक की आवश्यकता के अनुसार बीयर बार में बैठकर बीयर पीती भी देखी जा सकती है। भूमंडलीकरण हमारे आज के समय और समाज की सच्चाई है। इससे भी अधिक कड़वी और तीखी सच्चाई यह है कि भूमंडलीकरण के रूप में एक अर्थकेंद्रित नव साम्राज्यवाद पूरी दुनिया में पांव पसार चुका है। ऊपरी तौर पर संसार में एक भाषा, व्यापारिक संबंध, समान मुद्रा, नजदीकी संपर्क, सूचना क्रांति का डिजिटलीकरण जैसी बातें आकर्षक लगती हैं, मगर इसके असल मायने कहीं जुदा हैं। विश्वग्राम की यह धारणा 'वसुधैव कुटुम्बकम' के महाभाव से प्रेरित नहीं है, बल्कि हित-साधना का नया तरीका है। यहां सबके कल्याण की उदात्त भावना नजर नहीं आती, अपितु आर्थिक उदारीकरण के नाम पर मुक्त बाजार में मुनाफा कमाने की होड़ ही इसका मूल मंत्र है। विगत ढाई दशकों का अनुभव इस बात का प्रमाण है कि भूमंडलीकरण का सारा ताम-झाम असल में बाजार पर अवलंबित है। यहां नए बाजार तलाशना और माल बेचना ही परम लक्ष्य है। हम जानते हैं बाजार में आदमी की अहमियत उपभोक्ता से अधिक नहीं होती। जब तक आपकी जेब भरी हुई है बाजार आपकी कद्र करता है। जेब खाली होते ही बाजार ऐसे मुंह मोड़ता है, जैसे आपको जानता तक नहीं हो। विचारणीय तथ्य यह है कि अब बाजार हमारे घर और किचन-बेडरूम तक पहुंच गया है। विज्ञापन की आड़ में हमारे मन-मस्तिष्क को नियंत्रित करने का प्रयास किया जा रहा है। कहना न होगा कि संचार माध्यमों पर बाजार का एकछत्र कब्जा हो चुका है। मंशा यह है कि दुनिया वही सोचे-करे, जो बाजार चाहता है। इस आंधी की चपेट में आकर व्यक्ति अपनी सांस्कृतिक जड़ों से कट रहे हैं, अपने परंपरागत मूल्यों से दूर जा रहे हैं। यह संक्रमण काल है। इसमें मूल्यहीनता की स्थिति पैदा हो रही है, क्योंकि इस नव साम्राज्यवादी व्यवस्था में केवल अर्थ ही मूल्य है बाकी सब गौण। भूमंडलीकरण की इस प्रक्रिया में उपजे इस बाजारवाद ने महज आर्थिक पक्ष को ही प्रभावित नहीं किया है, बल्कि हमारे सामाजिक-राजनीतिक-धार्मिक जीवन को भी अपनी जद में ले लिया है। कला-साहित्य-संस्कृति जैसे क्षेत्र भी इससे अछूते नहीं रहे। इस बदले और बदल रहे परिदृश्य में राजस्थानी कहानी की बात करें तो सुखद अनुभूति होती है कि कहानीकारों ने न केवल भूमंडलीकरण के मायनों को समझा है, अपितु बाजारवादी व्यवस्था के रूप में उसके असली चेहरे को भी बेनकाब किया है। राजस्थानी समाज की संवेदनाएं व सरोकारों में भूमंडलीकरण से आए बदलावों को भी कहानीकारों ने अपनी कहानियों में उतारा है। फेसबुक-व्हाट्सएप के इस दौर में युवा पीढ़ी के बीच पनप रही एक नई साइबर संस्कृति तक भी कहानीकारों की निगाहें पहुंची है, जहां सोशल साइट्स के सहारे संपर्क तो बढ़े है वहीं संबंधों में अपनापन गायब है। भूमंडलीकरण से कहानियों की विषय-वस्तु में उल्लेखनीय बदलाव आए हैं, वहीं भाषा-शिल्प भी नई चाल में ढला है। भूमंडलीकरण के अनेक पहलू राजस्थानी कहानियों में प्रकाशित हुए हैं। मसलन परंपरागत धंधों से मोहभंग, अर्थमोह, भौतिक सुविधाओं की लालसा, कॅरियर के लिए घनघोर स्पर्धा, सफलता के बदलते मापदंड, नैतिक मूल्यों के प्रति बदलता नजरिया, तकनीक का प्रचार-प्रसार, राजनीति व समाजसेवा की नई परिभाषा, जाति आधारित आरक्षण से निर्मित नवीन वर्ग व्यवस्था, सरकारी महकमों का ढर्रा, कृषि व कृषकों के हालात, संबंधों का बदलता

चेहरा, क्षेत्रीय भाषाओं व आदिवासी समाज की सांस्कृतिक विशिष्टताओं पर मंडराता खतरा आदि। भूमंडलीकरण के ऐसे ही अनछुए पक्षों को राजस्थानी कहानीकारों ने सूक्ष्मता से उजागर किया है। उपज का सही मूल्य नहीं मिलने से किसानों का दर्द व आत्महत्या जैसे अंतिम विकल्प को चुनने की विवशता कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था का सच बयां करती जान पड़ती है। रामेसर गोदारा की कहानी 'छेकड़ली लकड़ी' बताती है कि कैसे लहसुन की लहलहाती फसल के साथ जीते किसान के सपने बाजार तक पहुंचने से पहले मुरझा जाते हैं। ऐसे में न उगलते बनता है न निगलते। नवनीत पाण्डे की कहानी 'म्हारी ठौड़' भी शिक्षा के क्षेत्र में धन-बल के बोलबाले की सच्चाई को सामने लाती है। चिकित्सा के क्षेत्र में व्यावसायिकता इतनी हावी हो गई है कि धरती के भगवान माने जाने वाले चिकित्सकों ने अपने हुनर को तिजोरी भरने का जरिया बना लिया है। संवेदनहीनता की इससे बड़ी त्रासद स्थिति और भला क्या हो सकती है कि चिकित्सक पैसों के लालच में भ्रूण में पलती कन्या की हत्या को तैयार रहते हैं, इलाज करवाने आए मरीज की किडनी आदि निकाल लेते हैं, फीस के बिना दर्द से कराहते मरीज को लौटा देते हैं। प्रहलाद श्रीमाली की कहानी 'इलाज री दुकान' अस्पतालों की इसी सच्चाई से साक्षात् करवाती है।

लीलटांस (संपादकः कुमार अजय) के कहानी अंकों ने राजस्थानी कहानी के सामर्थ्य की झांकी प्रस्तुत की है। राजस्थानी की पत्रिकाओं बिणजारो, माणक, राजस्थली, जागती जोत आदि ने भी नियमित रूप से कहानियां प्रकाशित करके कहानी विधा की पहुंच में इजाफ़ा किया है। इधर 'कथेसर' व 'हथाई' पत्रिका ने दलित विमर्श पर केन्द्रित विशेषांक निकाले हैं। रामस्वरूप किसान, उम्मेद धानिया, राजू सारसर राज, शिव बोधि, बी.एल.पारस आदि ने दलित चेतना की कई कहानियां लिखी है, जो स्वतंत्र संग्रह व पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से सामने आई हैं। हरीश बी. शर्मा अपनी कहानी 'बाजोट' में औरतजात के सपनों और सच के अंतर को उजागर करते हैं। सतीश छिम्पा 'वान्या अर दूजी कहाणियां' संग्रह में युवा मन की आकुलता, आकांक्षा व संघर्षों के साथ स्त्री-पुरुष संबंधों को भी बेबाकी से कहानी का विषय बनाते हैं। इधर कई महिला कहानीकारों की समकालीन कथा-परिदृश्य में उपस्थिति ध्यान खींच रही है। संतोष चौधरी अपने ताजा प्रकाशित कहानी संग्रह 'काया री कळझळ' में कई नए विषयों को उठाती है। किताब में संकलित 'टूंटियो' कहानी में नारी मन के ओनों-कोनों की थाह लेने की चेष्टा प्रभावित करती है। रीना मेनारिया, किरण राजपुरोहित नितिला, कीर्ति शर्मा आदि ने बीते दो दशकों में कई अच्छी कहानियां लिखी हैं, जिनमें नारी मन की विश्वसनीय अभिव्यक्ति हुई है। कहानियों की दुनिया भी बड़ी निराली है। कहानियां हमारा हाथ थाम कर हमें एक नितांत नई दुनिया में ले जाती है। यह दुनिया इतनी जादुई है कि कथारस में निमग्न होते ही पाठक अपना-पराया भूल जाता है। उसका मन कहानी के पात्रों की खुशियों में नाचने लगता है, तो पात्रों के गम में उसकी आंखों में नमी उतर आती है। खास बात यह है की इन कहानियों का उद्गम हमारी दुनिया से ही होता है। मेहरचंद धामू की कहानियों में हमारी इर्द-गिर्द की दुनिया के विश्वसनीय ब्यौरे दर्ज हुए हैं। डॉ. कृष्ण कुमार आशु के राजस्थानी में पहले कहानी संग्रह 'च्यानणै रा एनाण' में ऐसे कई हॉट-स्पॉट हैं जहां पाठक खुद को भावना के आवेग में बहता हुआ महसूस पाता है। कहना न होगा, कहानी के कथ्य में महिला, दलित के साथ थर्ड जेंडर के विमर्श की सशक्त उपस्थिति से आज की कहानी का फलक चैड़ा हुआ है। यद्यपि आज भी अनेक रचनाकार परंपरागत ढंग की कहानियां रच रहे हैं, मगर कहानी के परिदृश्य में नए व ऊर्जावान रचनाकारों का पदार्पण बड़ी संभावनाओं को जगाने वाला कहा जा सकता है। आज की कहानी ने वस्तु के स्तर पर नया भावबोध अपनाया है, वहीं शिल्प के स्तर पर भी नया रंग-रूप धारण किया है।आज के कहानीकार सब कुछ कहने में यकीन नहीं करते। असल में यह पाठक पर कहानीकार के बढ़ते भरोसे का द्योतक है। वर्णन के मोह से निकलकर सांकेतिकता की तरफ उन्मुख होना कहानी के कला-पक्ष का महत्त्वपूर्ण बदलाव है।

संवाद शैली की जो शुरुआत आठवें दशक में सांवर दइया ने की थी, वह आज कई-कई रूपों में पुष्पित-पल्लवित हुई है। श्याम जांगिड़ की कहानी 'अेहसान' में केवल एक पात्र का संवाद है। शिल्प के लिहाज से यह एक अलग ढंग की कहानी है। हाल के वर्षों में कहानी ने फोटोग्राफी-सिनेमेटोग्राफी, पैंटिंग और अन्य कला माध्यमों के कौशलों को अंगीकार किया है। मधु आचार्य 'आशावादी' की रंगमंचीय उपकरणों को अपनी कहानी में बखूबी इस्तेमाल करते हैं। इधर श्यामसुंदर भारती, भरत ओळा आदि ने कई लंबी कहानियां लिखी है। आज की कहानियों में डिटेलिंग का हुनर कहानी के परिवेश को विश्वसनीय बनाता है। पूर्ण शर्मा पूर्ण की 'सिम्मट री छोरी' और अरविंद सिंह आशिया की कहानी 'बाथरूम स्लीपर्स' में परिवेश का अंकन पाठकों को एक नए अनुभव से गुजारता है। प्रमोद कुमार शर्मा की कहानी 'औकात' का शिल्प विधान रोचकता बढ़ाने वाला है। मनोज कुमार स्वामी का पत्रकार कहानी लेखन के दौरान भी बराबर सक्रिय रहता है। निसंदेह शिल्प के प्रति कहानीकारों की सावचेती कहानी की पठनीयता को बढ़ानी वाली है, अलबत्ता भाषा के स्तर पर आज की कहानी में कुछ गंभीरता की जरूरत नजर आती है। जरूरत के मुताबिक अंग्रेजी अथवा अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग तो स्वीकार्य है, मगर हिंदी शब्दों की अधिकता खटकने वाली है। कहानीकार को भाषा और स्वयं द्वारा प्रयुक्त शब्द-रूपों की समरूपता पर ध्यान देना होगा।

इक्कीसवीं सदी में राजस्थानी कहानी की रंग और खुशबू हिंदी के माध्यम से देश-दुनिया तक पहुंची है। इस उद्देश्य की पूर्ति में राजस्थानी कहानी के मूल व अनूदित संग्रहों का बड़ा अवदान है। डॉ. नीरज दइया के संपादन में 'एक सौ एक कहानियां' संकलन का प्रकाशन निश्चय ही एक ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य है। डॉ. दइया ने 'राजस्थानी कहानी का वर्तमान' व 'राजस्थानी साहित्य का समकाल' जैसी आलोचनात्मक कृतियों के माध्यम से राजस्थानी कहानी की चर्चा को व्यापक फलक प्रदान किया है। नेशनल बुक ट्रस्ट ने नंद भारद्वाज के संपादन में 'तीन बीसी पार' व साहित्य अकादमी ने मालचंद तिवाड़ी व भरत ओला के संपादन में 'साखीणी कथावां' और पिछले दिनों मधु आचार्य आशावादी के संपादन में 'आज री राजस्थानी कहाणियां' संग्रह का प्रकाशन किया है। श्याम जांगिड़ (आज री राजस्थानी कहाणियां) व मधुकर गौड़ (सोळै जोड़ी आंख) के व्यक्तिगत प्रयासों से प्रकाशित-संपादित कहानी संग्रह भी उल्लेखनीय हैं। सावित्री चौधरी के अनुवाद व संपादन में प्रकाशित संग्रह 'इक्कीस पंखुड़ियों का गुलाब' इस क्रम को आगे बढ़ाने वाला प्रयास है। राजस्थानी कहानी पर केंद्रित 'कुरजा संदेश' पत्रिका के विशेषांक ने राजस्थानी कहानी की सौरभ को हिंदी पट्टी में फैलाया है। हाल के वर्षों में मराठी, पंजाबी, कन्नड़, मैथिली भाषा की महत्वपूर्ण पत्रिकाओं ने राजस्थानी कहानी पर केंद्रित विशेषांक प्रकाशित किए हैं, जिससे भारतीय भाषाओं के बीच राजस्थानी कहानी की सार्थक उपस्थिति दर्ज हुई है। 'कथा पंजाब' के डलहौजी में कहानी विधा पर केंद्रित वार्षिक संगोष्ठी में पिछले कुछ वर्षों से राजस्थानी कहानी को भी शामिल किया जा रहा है। इस आयोजन में अब तक भरत ओला, मदन गोपाल लढ़ा, दिनेश पांचाल आदि अपनी कहानियां पढ़ चुके हैं। बीते दो दशकों में साहित्य अकादमी की ओर से राजस्थानी भाषा के लिए मुख्य पुरस्कार से कहानीकार के रूप में भरत ओला (2002), चेतन स्वामी(2005), दिनेश पांचाल (2008), मेजर रतन जांगिड़ (2009), रामपालसिंह राजपुरोहित (2014), बुलाकी शर्मा (2016), रामस्वरूप किसान (2019), डॉ जितेंद्र कुमार सोनी (2025) सम्मानित हुए हैं। जिस तरह तकनीकी क्रांति ने समय की रफ्तार को तेज कर दिया है उसी तरह राजस्थानी कहानी भी वक्त से कदमताल करते हुए अपनी गति से भारतीय कहानी में अपना स्थान बना रही है। हमारे देश और क्षेत्र विशेष के जीवन विधान में भी नित्य प्रति परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में समय-समाज के विविध पहलुओं की पहचान कर कहानी में प्रामाणिक अंकन सतत साधना की मांग करता है। लिहाजा लोक सरोकारों और अपनी माटी से जुड़े कहानीकार ही इस नवीन परिदृश्य की सच्चाइयों को सामने लाने में सफल हो सकते हैं। उम्मीद की जा सकती है कि राजस्थानी कहानीकार आने वाले समय में इस दिशा में नई जमीन तोड़ेंगे व भारतीय कहानी के विहंगम परिदृश्य में अपनी प्रभावी व सार्थक उपस्थिति सतत बनाए रखेंगे।